IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

दिल्ली आर्ट थिएटर और शीला भाटिया

विष्णु कुमार

Ph.D *नाट्यकलाशास्त्र (प्रदर्शनकारी कला विभाग)*

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

सारांश

इप्टा का उद्भव भारत मे उस समय हुई जब एक दुनिया मे द्वितीय विश्वयुद्ध जारी था वहीं दूसरी तरफ सोवियत संघ पर तानाशाही ताकतों का शिंकजा अत्यधिक मजबूत हो रहा था। भारत में औपनिवेशिक साम्रज्यवाद के विरोध में 'भारत छोड़ो आंदोलन' उफान पर था। इप्टा के माध्यम से समाज में नई चेतना जगाने के लिए नृत्य,गीतोंऔर नाटकों को माध्यम बनाया जा रहा था। इप्टा की स्थापना आज़ादी के संघर्ष में राष्ट्रीय स्तर पर रंगमंच को लेकर कोई सुगठित राष्ट्रीय मंच की कमी को पूरा करने के लिए तथा साथ ही थिएटर के माध्यम से समूचे राष्ट्र की चेतना को जगाने के लिए इप्टा की स्थापना हुई थी। दरअसल इप्टा ने नाटक, संगीत - नृत्य आदि के माध्यम से उस समय के यथार्थ को प्रदर्शनकारी कला रूपों की विषयवस्तु बनाकर समाज को नई चेतना से अवगत करवाया। इप्टा के समय रंगकर्मियों ने राष्ट्र के सभी गांव एवं शहरों तक अपना संदेश तथा उद्देश्य पहुंचाने के लिए सभी भाषायों के प्रगतिशील कवियों। लेखकों एवं कलाकारों की एक बड़ी मण्डली को अपने साथ जोड़ा। इन्हीं की तमाम कोशिशों से समाज साहित्य और कलाओं के अंतःसबंधों को समझने की एक नई दृष्टि आज़ादी के आन्दोलन में विकसित हुई।

बीजक शब्द - इप्टा, हिंदी रंगमंच, शीला भाटिया, हिंदी नाट्य परंपरा

इप्टा की देशभर में गाँव – गाँव तथ शहर – शहर शाखाएं बनी। उसी दौर में लाहौर इप्टा की ब्रांच बनी। जहाँ कम्युनिस्ट पार्टी के कल्चरल विंग की एक इकाई का मेंबर शीला भाटिया को बनाया गया।शीला भाटिया उस समय लाहौर में गणित की अध्यापिका थीं तथा साथ ही जनवादी गीत तथा लोकगीतों के माध्यम से लगातार समाज को जागरूक कर रहीं थी। लाहौर में जब राशन के डिपो पर कुछ महिलाएं झगड़ने लगी थी तो पहली बार शीला ने अपना पहला गीत गया था और उन्हें देश की आज़ादी के संघर्ष के लिए प्रेरित करती थी। गीत था –

उठ खड़ कुड़िये मुटियारे नी,तेरा देस तैनूं ललकारे नी

न खंड न आता डब्बियाँ, न तेल न लकड़ा लब्बियाँ

तेरे बाल भुखेरे मरदे, उठ न कुढ़ - कुढ़ हड्डियाँ साड़

तू आपे भुख मिटानी ऐ, तू आपे नंग मिटानी ऐ

इज्जत तूं आप बचानी ऐ, साडे लीडर सुननों हारे नी

लाहौर में इप्टा का बोलबाला था। शीला भाटिया इप्टा के कल्चरल प्रोग्रामों के जरिये लोगों तक पहुंचकर, उनके दिमाग में गाकर, नाचकर तथा नाटक के जरिये सियासी सवाल भी तथा जवाब भी लोगों तक पहुंचाते थीं। सैकड़ो लोग वह कार्यक्रम देखने आते थे। शीला भाटिया के लिए लोगों तक पहुँचने का यह एक सार्थक जरिया था। इप्टा के एक कार्यक्रम में शीला जी नें एक गीत ऐसा लिखकर गाया कि हजारों लोगो की आँखों में आंसू आ गये। इस कार्यक्रम के सालों बाद भी कहीं भी इप्टा की कांफ्रेंस होती तो लोग उनसे मिलकर उस गीत का जिक्र करते हुए कहते कि उस साल आपके गीतों ने पूरे प्रदेश को रुलाया था। शीला भाटिया ऐसी घटनाओं से खूब प्रभावित होती और इनसे प्रेरणा लेकर वह और बेहतर गीतों का निर्माण करती। गीतों का दौर चलता रहा लोगों से जुड़ते हुए उनकी जिंदगी पर और लेखनी पर प्रभाव देखा जा सकता है। कश्मीर

आज़ादी के आन्दोलन में इप्टा का इतना असर था कि प्रदर्शनकारी कलाओं के बड़े बड़े कलाकार इप्टा से जुड़े थे। परन्तु आज़ादी के बाद इप्टा बिखरने लगा, बिखरन और टूटन की जिन परिस्थितियों से इप्टा को गुजरना पड़ा वह भारतीय रंगमंच के लिए दुर्भाग्यपूर्ण था। इसमें कोई संदेह नहीं की भारतीय रंगमंच का यह विघटन का दौर था। जहाँ विचार, नैतिकता, आदर्श, रोमांटिसिज्म के आधार पर की गई बेहद शानदार शुरुआत अपनी संभावनाओं के साथ पूर्ण रूप से न्याय करने में असमर्थ रही। इप्टा के सभी सदस्य आज़ादी के बाद संगठन के सारे आदर्शों के होने के बावजूद धीरे - धीरे निकलते चले गए शीला भाटिया कहती है कि " मैं कश्मीर से दिल्ली वापस आ चुकी थी और दिल्ली आर्ट्स थिएटर बन रहा था। तभी एक दिन नंबूदरीपाद साहब हमारे घर तशरीफ़ लाए। कहने लगे तुम अब दिल्ली आ गई हो, इप्टा को खड़ा करो।' मैनें उनसे साफ़ कहा, 'घोड़ा मर चुका है, मैं उसपर चाबुक चालने को तैयार नहीं हूँ।' उस वक्त घर में कुछ लोग मौजूद थे। मेरा जवाब सुनकर सब डर गए थे कि मैनें कम्युनिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी को ना कहने की जुर्रत की है, वह पता नहीं कैसे रिएक्ट करें ! दिल्ली आर्ट थिएटर बना। इप्टा नहीं बना।"[1]

शीला जी के साथ थिएटर के संदर्भ में ये हुआ की लाहौर और कश्मीर का थिएटर छुट चुका था। 1951 में कश्मीर से दिल्ली आने के बाद उन्होंने एक थिएटर ग्रुप बनाने का फैसला किया। लाहौर से रिफ्यूजी बनकर आए दोस्तों को खोजा जिनमे स्नेह सान्याल, उषा भगत, स्वंतत्रता प्रकाश आदि के साथ – साथ संस्थापकों में इंद्र कुमार गुजराल,हाली वत्स, वेद व्यास, बलवंत गार्गी, अमृत नायर, प्रोफेसर फ्रैंक ठाकुर दास तथा शीला भाटिया नें मिलकर थिएटर शुरू किया। थिएटर ग्रुप का उद्देश्य भारत में थिएटर को एक मूवमेंट की तरह मजबूत करना, भारतीय आधुनिक एवं शास्त्रों का अध्ययन करके एक समकालीन रंगमंच का विकास करना। स्टेज के

[1] शीला भटिया – लेखक : जे.एन. कौशल, पेज – 28

संदर्भ में पाश्चात्य तकनीक को बढ़ावा देना। जहाँ तक भाषा का सवाल है, 'दिल्ली आर्ट थिएटर' उन विरले दलों में से था, जिसने पंजाबी, उर्दू, हिंदी तथा हिन्दुस्तानी भाषाओँ में अपने नाटकों को प्रस्तुत किया। हर वर्ग और भाषा के दर्शकों ने उन्हें समझा और उनका आनंद उठाया। शीला जी के लिए दिल्ली आर्ट थिएटर की शुरुआत करना इतना आसान नहीं था। आज़ादी के बाद भारत में रंगमंच पर काम करने का शीला भाटिया को पहला मौका कश्मीर में मिला। वहाँ सरकार नेशनल कल्चरल फ्रंट शुरू कर रही थी। इस इदारा (संस्था) में 40 लोगों की टीम थी जिसमे वादी के नामी शायर, गवैये, लेखक शामिल थे। शायर नज्में लिखते थे फिर उनकी धुन बनाई जाती थी फिर साजिंदे साज बजाकर उसे पूरा करते थे। सब कुछ तैयार होने के बाद फिर गाँव – गाँव उन प्रोग्रामों को लेकर घूमते थे। लोगों तक पहुँचने के लिए वहां की लोकनाट्य शैली 'भांड पाथर' का खूब प्रयोग किया जाता था। 40 लोगों की इस संस्था में शीला भाटिया अकेली महिला थी, उनके लिए ये अनुभव चुनौतियों से भरा था। यहाँ से उन्होंने नाटकों को निर्देशित करना शुरू किया। वह नाटकों में हिस्सा भी लेती और उन्हें डायरेक्ट भी करती। उन्हीं दिनों कश्मीर में रेडियो स्टेशन कायम हुआ। उस रेडियो से ब्रोडकास्ट करने वाली पहली औरत शीला भाटिया थीं। शीला जी को जो मान और सम्मान और अपनापन जितना कश्मीर में मिला वह उन्हें फिर बहुत कम प्राप्त हुआ। एक साल बाद ही 1951 में वह दिल्ली लौट आई। दिल्ली आने के बाद उन्हें एक सेमिनार में सरदार जी मिले उन्होंने बताया कि अभी भी उनके गाँवों में लोग उनके गीतों को गुनगुनाते है और उन्हें याद करते है। शीला जी को ऐसी घटनाएँ बहुत प्रभावित करती थी और उन्हें इनसे प्रेरणा मिलती थी।

कमला देवी चट्टोपाध्याय जैसी शख्सियत भी शीला जी के 'ओपेरा थिएटर' से प्रभावित थीं और शायद इसलिए ही 1959 में 'नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा एंड एशियन थिएटर इंस्टीट्यूट' की शुरुआत करने के बाद कमला देवी जी ने शीला भाटिया जी को वहाँ पढ़ाने का ऑफ़र दिया और फिर अध्यापिका के रूप में उन्होंने लगभग २० वर्षो तक एनएसडी में पढ़ाया और अभिनय प्रशिक्षण दिया और नाटक डायरेक्ट किये।

NSD से अलग दिल्ली आर्ट थिएटर के साथ शीला जी व्यस्त रहीं। दिल्ली आर्ट थिएटर के साथ वह लगातार म्यूजिकल प्ले करती रहीं। म्यूजिकली प्ले करते हुए शीला जी को एक खतरा हमेशा रहता कि हमारे पास म्यूजिक भी है और अपनी बात कहने का अंदाज भी पर कहीं बात म्यूजिक पर हावी न हो जाए। नाटक में भाषण झाड़ना या कोई गहरी बात इशारों में कह देना यह आपकी ग्रोथ पर निर्भर करता है। लेकिन नाटक हो जाने के बाद दर्शकों का रिस्पोंस बता देता था कि नाटक सफल हुआ या असफल। मुंशी प्रेमचंद्र के गोदान का विष्णु प्रभाकर द्वारा 'होरी' के नाम से रूपांतरण नाटक मंचित किया गया। उसमे शीला जी ने अभिनय करते हुए धनिया की भूमिका निभाई। यह नाटक दर्शकों ने खूब पसंद किया और साथ ही शीला जी को इस नाटक में अभिनय के लिए सम्मानित भी किया गया।

शीला जी थिएटर को एक मूवमेंट की तरह ही देखती थी और उसी तरह उसका उपयोग भी करती थी। उनका मानना था कि मनोरंजन के साथ – साथ थिएटर को कुछ कहना जरुर चाहिए। थिएटर करते हुए शीला जी के व्यक्तित्व की दो पहचान बन चुकी थी। पहली उनकी आवाज और दूसरा डिसिप्लिन। आप जो भी करें उसमे अनुशासन जरुर होना चाहिए। किसी भी काम को शुरू करने में,

उस पर काम करते वक्त या उस काम को समय पर खत्म करने में। शुरू से अंत तक किसी भी काम से जुड़े रहने पर एक अनुशासन हमेशा रहना चाहिए।

आज़ादी के बाद 'दिल्ली आर्ट थिएटर' का बनना भारतीय रंगमंच में एक ऐतिहासिक घटना थी। जिसने आज़ादी के बाद के भारत में रंगमंच को एक दिशा दी। आजादी के बाद भारत के आगे तमाम चुनौतियाँ थी, नवनिर्माण करते देश से उम्मीदें जनता को थीं। नये युग की तरफ बढ़ते भारत की ओर सभी आशा की नजरों से देख रहे थे, देश की राजधानी शरणार्थियों का केंद्र बन चुकी थी। ऐसे में सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्रभक्ति का भाव और मनोरंजन से दिल्ली में दिल्ली आर्ट थिएटर का निर्माण हुआ।

दिल्ली आर्ट थिएटर द्वारा प्रस्तुत की गई प्रमुख प्रस्तुतियां निम्नलिखित है-

1. 1951 - कॉल ऑफ़ दि वैली
2. 1952 – केसरो (बलवंत गार्गी)
3. 1953 – रुक्खे खेत
4. 1956 – हीर – राँझा
5. 1963 – पृथ्वीराज चौहान
6. 1966 – चन्न बदला दा
7. 1969 – ग़ालिब कौन हैं (SM Mehndi)
8. 1971 – जान -ए-गजल (SM Mehndi)
9. 1972 – किस्सा यह औरत का हव्वा से हिप्पी तक
10. 1977 – नादिर शाह
11. 1977 - यासमीन (लोर्का कृत 'यरमा')
12. 1978 – जुगनी
13. 1978 – जीवन की है
14. 1979 – दर्द आयेगा दबे पाँव
15. 1980 – यह इश्क नहीं आसां
16. 1981 – मानसरोवर
17. 1981 – शहंशाह अकबर
18. 1983 – सुलगदे दरिया
19. 1983 – द्रौपदी (कमाल अहमद सिद्दीकी, भारत भूषण)
20. 1985 – कागज ते कैनवास
21. 1985 – तेरे मेरे लेख

22. 1985 – कतार

23. 1987 – आमिर खुसरो (नियाज हैदर)

24. 1990 – उमर खैयाम

25. 1992 – शबनम

26. 1993 – मुकद्दर

27. 1995 – धरती

28. 1997 – नसीब

29. 1999 – मैं और वह

संदर्भ

1. इप्टा की यादें, सम्पादक राजेंद्र शर्मा : सहमत प्रकाशन, दिल्ली, 2012
2. दिल्ली का हिंदी नाटक और रंगमंच, सं.रमेश गौतम, अभिरुचि प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2000
3. नाटक के सौ बरस, सं अजित पुष्कल / हरीशचंद्र अग्रवाल : शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली.संस्करण 2013
4. .भारतीय रंगकोश, खंड : दो, सं प्रतिभा अग्रवाल : राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली, संस्करण 2003
5. भारतीय रंगमंच का विवेचनात्मक इतिहास, डॉ. अज्ञात : पुस्तक संस्थान प्रकाशन, कानपुर, संस्करण 1978
6. रंग दस्तावेज सौ साल, खंड : दो, महेश आनंद : राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2007
7. शीला भाटिया – लेखक : संपादक जे.एन. कौशल : राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय प्रकाशन, दिल्ली